रूसी कहानी

मैक्सिम गोर्की

नीली आँखों वाली स्त्री

नीली आँखों वाली स्त्री (रूसी कहानी) : मैक्सिम गोर्की

1

सहायक पुलिस-अफ़सर पोदशिबलो उक्रइन का निवासी था - मोटी और उदास प्रकृति। दफ़्तर में बैठा वह अपनी मूँछों में बल डाल रहा था और उदास मुँह बनाये खिड़की से बाहर पुलिस स्टेशन के हाते में ताक रहा था। दफ़्तर अँधेरा, दमघोंट और बहुत ही निस्तब्ध था। घण्टे के पेण्डुलम की टिकटिक के सिवा - जो एक सुर से घड़ियाँ गिन रहा था - और कोई आवाज़ नहीं आ रही थी। बाहर अहाता ख़ूब उजला था और बरबस हृदय को खींचता था। उसके बीच में उगे बर्च के तीन वृक्ष भरपूर छाँह किये थे और इस छाँह में पुलिसमैन कुख़ारिन जो अभी अपनी ड्यूटी पूरी करके लौटा था, घास के एक ढेर पर - जो आग बुझाने वाले घोड़ों के लिए वहाँ जमा थी - पड़ा सो रहा था। यही वह दृश्य था जिसने सहायक पुलिस अफ़सर पोदशिबलो का पारा गरम कर दिया था। उसका मातहत सो सकता था जबकि उसे - अभागे चीफ़ को - इस दड़बे में बैठना और दमघोंट हवा में साँस लेना पड़ रहा था। पत्थर की दीवारें गन्ध छोड़ रही थीं। उसने कल्पना की - कितना आनन्द आता अगर

वह वहाँ, बर्च वृक्षों की छाया में भीनी गन्धवाली घास के उस ढेर पर, सो पाता। लेकिन इसका समय कहाँ था? फिर उसका पद भी इसकी इजाज़त नहीं देता था। सो, सोचते- सोचते, उसने अपने बदन को ताना, जम्हाई ली और पहले से और भी अधिक खीझ उठा। उसके हृदय में पुलिसमैन कुख़ारिन को जगाने की इच्छा इतने ज़ोरों से उभरी कि दबाये न दबी।
“एइयू, कुख़ारिन! ऐ सुअर, कुख़ारिन!” वह गरजा।

उसके पीछे का दरवाज़ा खुला और किसी ने भीतर पाँव रखा। पोदिशबलो, पहले की भाँति, खिड़की से बाहर देखता रहा, न तो उसने पलटकर पीछे की ओर देखा और न ही यह जानने के लिए ज़रा-सी भी उत्सुकता प्रकट की कि कौन आया है और दरवाज़े के रास्ते में खड़ा अपने बोझ से फ़र्श के तख़्ते को चरचरा रहा है। कुख़ारिन पर उसके गरजने का कोई असर नहीं हुआ, वह कसमसाया तक नहीं। वह गहरी नींद में सो रहा था। अपने हाथ का उसने तकिया लगा रखा था, और उसकी दाढ़ी ऊपर को नोक किये आकाश से बतिया रही थी। सहायक पुलिस अफ़सर को लगा जैसे उसके मातहत के खर्राटे भरने की आवाज़ उसकी खिल्ली-सी उड़ा रही हो, झपकी लेने की उसकी अपनी इच्छा को उकसा रही हो और ऐसा न कर सकने पर उसे कोंच और कुरेद रही हो। इससे उसकी खीझ और भी तेज़ हो गयी। उसके जी में हुआ कि अभी उठकर जाये और कुख़ारिन की मोटी तोंद पर कसकर एक लात जड़े, फिर उसकी दाढ़ी पकड़कर खींचता हुआ उसे साये से बाहर ले आये और झुलसा देने वाली धूप में

खड़ा कर दे।

“एइयू, वहाँ पड़ा खर्राटे भर रहा है। सुनता नहीं!”
“हुकुम, सरकार, ड्यूटी पर अब मैं हूँ,” उसके पीछे से एक नर्म आवाज़ आयी।

पोदशिबलो घूम गया और उस पुलिसमैन पर अपनी चौंधिया देने वाली नज़र जमा दी जो सूनी आँखों से, दीदे फाड़े, उसकी ओर ऐसे देख रहा था कि कब हुकुम मिले जिसकी तामील में वह तुरत ज़मीन-आसमान एक कर दे।
“क्या मैंने तुम्हें बुलाया था?”
“नहीं, सरकार।”
“क्या तुम्हारी पेशी थी?” पोदशिबलो ने अपनी आवाज़ तेज़ की और अपनी कुर्सी में बल खाने लगा।
“नहीं, सरकार।”

“तब, अपनी खोपड़ी की ख़ैर चाहते हो तो यहाँ से फ़ौरन जहन्नुम रसीद हो जाओ!” उसका बायाँ हाथ किसी ऐसी चीज़ की टोह में मेज़ पर पहुँचा जिससे उसकी खोपड़ी की मरम्मत की जा सके और दाहिना हाथ मज़बूती से कुर्सी की पीठ को दबोचे था। लेकिन पुलिसमैन दरवाज़े में से चुपचाप पहले ही ग़ायब हो गया। उसका इस तरह जाना सहायक पुलिस अफ़सर को नहीं रुचा, उसे यह असभ्यतापूर्ण मालूम हुआ। इसके अलावा उसके लिए अपनी खीझ उतारना भी बेहद ज़रूरी था जिसे दफ़्तर की उमस, काम के बोझ, सोते हुए कुख़ारिन, आने वाले मेले और

अन्य कितनी ही अप्रिय बातों ने बिना बुलाये दिमाग़ में घुसकर उकसा दिया था।

“इधर आओ!” वह दरवाज़े में से चिल्लाया।

पुलिसमैन लौट आया और दरवाज़े में तनकर खड़ा हो गया। उसके चेहरे पर भय का भाव झलक उठा था।

“बेवक़ूफ़!” पोदशिबलो गुर्राया, “आँगन में जाओ और उस गधे के बच्चे कुख़ारिन को जगाकर कहो कि थाने का आँगन खर्राटे भरने की जगह नहीं है। बस, दफ़ा हो जाओ!”

“अच्छा, सरकार। एक स्त्री थाने में आयी है और...”

“क्या-आ-आ?”

“एक स्त्री...”

“कैसी स्त्री?”

“लम्बा क़द...”

“बेवक़ूफ़! वह क्या चाहती है?”

“आपसे मिलना...”

“पूछो, क्यों मिलना चाहती है। जाओ!”

“मैंने पूछा था। लेकिन उसने नहीं बताया। कहने लगी, वह ख़ुद सरकार से बात करना चाहती है।”

“अजीब मुसीबत हैं ये स्त्रियाँ भी। उसे यहाँ लिवा लाओ। क्या वह युवती है?”

“हाँ, सरकार!”

“अच्छा, उसे पेश करो। लेकिन जल्दी,” पोदशिबलो ने नर्म पड़ते हुए कहा। वह तनकर बैठ गया और मेज़ पर पड़े काग़ज़ों

को उलटने-पलटने लगा।

उसने अपने उदास चेहरे पर अफ़सरियत का कठोर नक़ाब धारण कर लिया।

पीछे से स्त्री के स्कर्ट के सरसराने की आवाज़ सुनायी दी।

उसने आधा मुड़कर अपनी आसामी की ओर देखा और पैनी नज़र से उसका जायज़ा लेते हुए बोला, “मैं तुम्हारे लिए क्या कर सकता हूँ?”

बिना कुछ कहे, सिर झुकाये, उसने अभिवादन किया और धीरे-धीरे मेज़ की ओर तैर चली। उसकी भौंहें खिंची थीं और अपनी गम्भीर नीली आँखों से वह अफ़सर की ओर देख रही थी। निम्न मध्य वर्ग की स्त्री की भाँति वह मामूली और सीधे-सादे कपड़े पहने थी। उसके सिर पर एक शॉल पड़ा था और वह कन्धों पर बिना आस्तीन का एक भूरा लबादा डाले थी जिसके छोरों को वह अपने छोटे-छोटे सुन्दर हाथों की नाजुक उँगलियों से बराबर मसोस रही थी। उसका क़द लम्बा, बदन गुदगुदा और वक्ष ख़ूब भरे-पूरे थे। उसका माथा ऊँचा और अधिकांश स्त्रियों से ज़्यादा गम्भीर और कठोर था। उसकी उम्र सत्ताईस के क़रीब मालूम होती थी। वह बहुत ही धीरे-धीरे और विचारों में डूबी मेज़ की ओर बढ़ रही थी, मानो मन ही मन कह रही हो,

“क्या उल्टे पाँव लौट जाना अच्छा न होगा?”

“नमूना बढ़िया है, जिसे निशाना बनाये, उड़ा दे!” पहली ही झलक में पोदशिबलो ने सोचा, “मुसीबत की पुडिया!”

“मैं जानना चाहती हूँ”, हरी और समृद्ध आवाज़ में उसने कहना

शुरू किया और फिर रुक गयी। उसकी नीली आँखें दुविधा में अफ़सर के गलमुच्छेदार चेहरे पर टिकी थीं।

“बैठ जाओ। अब बोलो, तुम क्या जानना चाहती हो?”

पोदशिबलो ने अफ़सरी अन्दाज़ में पूछा और मन ही मन सोचा, “है बढ़िया, पूरी रसभरी!”

“मैं उन कार्डों के लिए आयी हूँ,” उसने कहा।

“कैसे कार्ड, रिहाइश के?”

“नहीं, वे नहीं।”

“तो फिर कौन से?”

“वे, जो...उन्हें दिये जाते हैं...स्त्रियों को,” उसने अटकते और लाज से लाल पड़ते हुए कहा।

“स्त्रियाँ? कैसी स्त्रियाँ? क्या मतलब है तुम्हारा?” अपनी भौंहों को उठाते और छेड़छाड़ के भाव से मुस्कुराते हुए पोदशिबलो ने पूछा।

“दूसरे प्रकार की स्त्रियाँ...वे, जो सड़कों पर घूमती हैं...रात को।”

“तक! तक! तक! तुम्हारा मतलब यह कि वेश्याएँ?”

पोदशिबलो की बत्तीसी खिल गयी।

“हाँ, मेरा मतलब यही है”, स्त्री ने एक गहरी साँस ली और मुस्कुरायी भी, मानो अब, जबकि वह शब्द उच्चारित हो चुका, उसका काम आसान हो गया।

“अरे, यह तुम क्या कहती हो? हाँ तो?...” पोदशिबलो ने उसे फिर उकसाया। वह किसी दिलचस्प रहस्य के प्रकट होने की

आशा कर रहा था।

“हाँ, मैं उसी तरह के कार्डों के सिलसिले में आयी हूँ”, स्त्री ने कहना शुरू किया और एक आह भरकर तथा अपने सिर को अजीब ढंग से झटका देते हुए, जैसे किसी ने उस पर आघात किया हो, कुर्सी पर ढह गयीं।
“समझा। सो तुम चकला चलाने की बात सोच रही हो?”
“नहीं, मैं ख़ुद अपने लिए एक कार्ड चाहती हूँ,” - और उसका सिर झुकता चला गया - काफ़ी नीचे तक।

“ओह! तुम्हारा पुराना कार्ड कहाँ है?” अपनी कुर्सी को उसकी कुर्सी के और अधिक निकट खिसकाते और उसकी कमर की ओर अपना हाथ बढ़ाते हुए पोदशिबलो ने पूछा। उसकी एक आँख बराबर दरवाज़े पर टिकी थी।

“कैसा पुराना कार्ड? मेरे पास कोई कार्ड-वार्ड नहीं है,” पैनी नज़र से उसने उसकी ओर देखा, लेकिन उसके हाथ के स्पर्श से बचने का कोई प्रयत्न नहीं किया।

“सो तुम लुक-छिपकर धन्धा करती थीं, क्यों? बिना नाम दर्ज कराये? कितनी ऐसा करती हैं। लेकिन अब तुम नाम दर्ज कराना चाहती हो। यह ठीक है। अधिक सुरक्षित”, उसे बढ़ावा देते और उसके बदन पर और भी अधिक खुलकर हाथ डालते हुए पोदशिबलो ने कहा।
“मैंने पहले कभी यह धन्धा नहीं किया,” स्त्री के मुँह से निकला और उसने अपनी आँखें झुका लीं।

“क्या सचमुच? यह कैसे हो सकता है? मेरी समझ में नहीं आता,” अपने कन्धों को बिचकाते हुए पोदशिबलो ने कहा।

“मैंने इस पर अभी सोचना शुरू किया है। पहली बार मेले में यहाँ आने पर,” धीमी आवाज़ में, अपनी आँखों को उठाये बिना, स्त्री ने स्पष्ट किया।

“सो यह बात है,” पोदशिबलो ने अपना हाथ उसकी कमर पर से हटा लिया, अपनी कुर्सी को फिर वापस खिसकाया और पीठ से कमर टिकाकर बैठ गया, खोया हुआ-सा।

दोनों के दोनों चुप थे।

“तो यह बात है। ठीक। तुम चाहती हो...ऊँह...यह ग़लत है। बेशक ग़लत है। और कठिन है। यानी, देखो न...लेकिन आख़िर...हाँ तो...बड़ी अजीब बात है...अगर सच पूछो तो मेरी समझ में नहीं आता कि तुम कैसे वह सब कर सकोगी। यानी, अगर तुम सचमुच वही करना चाहती हो जो तुम कहती हो।”

सहायक पुलिस अफ़सर अनुभवी था। उसने देखा कि सचमुच में बात ऐसी ही है। वह इतनी सहज, स्वस्थ और भली थी कि वह उस बदनाम धन्धे की सदस्या नहीं बन सकती थी। इस धन्धे के चिह्नों का, जो कि हर वेश्या के चेहरे पर अंकित होते हैं - चाहे वह कितनी ही नौसिखिया या अनुभवहीन क्यों न हो, उसमें अभाव था।

“आप सच कहते हैं,” उसके मुँह से निकला और विश्वास में उमड़कर उसकी ओर झुक गयी, “सच, मेरा रोम-रोम इसका

साक्षी है। क्या मैं झूठ बोलूँगी, मैं, जो इस घिनौने धन्धे तक को अपनाने का एकबारगी निश्चय कर चुकी हूँ? निश्चय ही नहीं। लेकिन मुझे धन पैदा करना है। मैं विधवा हूँ। मेरा पति - वह अगन-बोट चलाता था - पिछले अप्रैल में बर्फ़ तड़कने से डूबकर मर गया। मेरे दो बच्चे हैं - नौ साल का एक लड़का और सात साल की एक छोटी-सी लड़की। और पैसा एक नहीं। सगे-सम्बन्धी भी कोई नहीं। जब मेरा विवाह हुआ, मैं अनाथ थी। मेरे पति के सम्बन्धी बहुत दूर रहते हैं और वे मुझे भिखारी से अधिक नहीं गिनते। मैं किसका मुँह देखूँ? मैं कोई मज़ूरी कर सकती थी, इसमें शक नहीं। लेकिन मुझे काफ़ी धन चाहिए, इतना अधिक, जितना कि मज़ूरी से मुझे कभी नहीं मिल सकता। मेरा लड़का स्कूल में पढ़ता है। मेरा ख़याल है कि उसकी फीस माफ़ कराने के लिए मैं दरख़्वास्त दे सकती हूँ। लेकिन उस पर - मेरी जैसी अकेली स्त्री की दरख़्वास्त पर - कौन ध्यान देगा? और वह, इतना छोटा होते हुए भी, बहुत ही होशियार लड़का है। उसे स्कूल से उठाना अत्यन्त बुरा होगा। और मेरी छोटी लड़की, उसके लिए भी दुनियाभर की चीज़ें चाहिए। जहाँ तक खरे धन्धों का सवाल है, वे मिलते ही कहाँ हैं? और अगर कोई मिल भी जाये तो क्या कुछ मैं पाऊँगी और उससे क्या कुछ मैं कर सकूँगी? अगर बावर्ची का काम करूँ? महीने में केवल पाँच रूबल हाथ लगेंगे। यह काफ़ी नहीं है। क़तई काफ़ी नहीं है। जबकि इस धन्धे में, अगर स्त्री का भाग्य चमक उठे तो, वह इतना अधिक पैदा कर सकती है कि अपने परिवार का पूरे एक

साल तक पेट भर सकती है। पिछले मेले में हमारे गाँव की एक स्त्री ने चार सौ से भी ज़्यादा रूबल बनाये थे। धन के इस अम्बार के बल पर उसने जंगलों के वार्डेन से शादी कर ली और अब कुलीन घराने की स्त्री की भाँति जीवन बिताती है। ख़ूब मौज से रहती है। अगर उसने वह न किया होता - उसकी लाज पर वह दाग़ न लगा होता। लेकिन तुम ख़ुद निर्णय करो। मुझे लगता है कि यह भाग्य का खेल है। हमेशा भाग्य ही सब कराता है। और जब यह विचार मेरे दिमाग़ में जम गया है, मैं समझती हूँ कि भाग्य मुझसे यही कराना चाहता है। अगर मैं धन पैदा कर लेती हूँ - अन्त भला तो सब भला, और अगर सिवा दुख और कलंक के और कुछ हाथ नहीं लगता - तो मेरा भाग्य! इस तरह मैं इसे देखती हूँ।"

पोदशिबलो उसके हर शब्द को पकड़ रहा था, उसके लिए जैसे उसका सम्पूर्ण चेहरा बोल रहा था। पहले उसके चेहरे पर भय की एक झलक दिखी, लेकिन धीरे-धीरे उस दृढ़ निश्चय का भाव उसके चेहरे पर झलकने लगा।

सहायक पुलिस अफ़सर बड़ी बेचैनी का और एक हद तक सकपकाहट का भी अनुभव कर रहा था।

पहली बार उसे देखने पर उसके हृदय में आशंका उठी थी और उसने सोचा था, "इस जैसी स्त्री के हाथों किसी बेवक़ूफ़ के फँसने भर की देर है, यह जीते जी उसकी खाल उतार लेगी और उसकी हड्डियों पर ज़रा-सा भी मांस नहीं रहने देगी," - लेकिन

अब - उसकी कहानी सुनने के बाद - उसने रुखी आवाज़ में कहा -

“मुझे दुख है कि मैं तुम्हारे लिए कुछ नहीं कर सकता। चीफ़ आफ पुलिस के पास अपनी दरख़ास्त भेजो। यह उसका काम है - और डॉक्टरी कमीशन का। मेरा इससे कोई वास्ता नहीं है।”

वह अब उससे छुटकारा पाना चाहता था। वह तुरत खड़ी हो गयी, अभिवादन में यूँ ही ज़रा-सा सिर उसने झुकाया और धीरे-धीरे दरवाज़े की ओर तैर चली। पोदशिबलो, अपने होंठों को कसकर भींचे और आँखों को सिकोड़े, उसे जाता हुआ देखता रहा। उसकी पीठ पर थूकने से अपने को रोकने के लिए इसके सिवा वह और कर भी क्या सकता था?

“सो मुझे चीफ़ ऑफ़ पुलिस के पास जाना चाहिए?” दरवाज़े तक पहुँचने पर उसने घूमकर पूछा। उसकी नीली आँखें शान्त संकल्प की दृढ़ता से उसे देख रही थीं और उसके माथे पर एक गहरी कठोर रेखा खिंची थी।

“हाँ, ठीक है,” पोदशिबलो ने तुरत जवाब देकर उसे निबटा दिया।

“अच्छा तो विदा। धन्यवाद,” और वह बाहर निकल गयी।

सहायक पुलिस अफ़सर ने मेज़ पर अपनी कोहनियाँ टिका दीं। और वहाँ बैठा सीटी की आवाज़ में मन ही मन दसेक मिनट तक कुछ गुनगुनाता रहा।

“कुतिया, एह!” अपना सिर उठाये बिना वह ज़ोर से बड़बड़ा

उठा, फ्बच्चे! भला बच्चों का इससे क्या वास्ता? ऊँह, हरजाई कहीं की!"

और एक बार फिर वह चुप हो गया, काफ़ी देर के लिए।

"लेकिन यह जीवन कौन कम हरजाई है, उसने जो कुछ कहा अगर वह सच है तो। वह आदमी को अपनी कनकी उँगली पर नचाता है। सच्चा आदमी भी क्या करे, कहाँ सिर पटके?

और फिर, एक क्षण रुककर, अपने मस्तिष्क की कारगुज़ारी की अन्तिम आहुति के रूप में, उसने एक गहरी साँस ली, अपनी उँगलियों को चटखाया और ज़ोरों के साथ यह उद्गार प्रकट किया -

"छिनाल!"

"क्या आपने मुझे बुलाया था?", डयूटी पर तैनात पुलिसमैन फिर दरवाज़े पर आ खड़ा हुआ।

"थू!..."

"क्या आपने मुझे बुलाया था, सरकार?"

"दफ़ा हो जाओ!"

"अच्छा, सरकार।"

"बेवक़ूफ़!" पोदशिबलो के मुँह से निकला और खिड़की से बाहर उसने नज़र डाली।

कुख़ारिन अभी भी घास के ढेर पर सो रहा था। स्पष्ट ही ड्यूटी पर तैनात पुलिसमैन उसे जगाना भूल गया था।

लेकिन सहायक पुलिस अफ़सर की झुँझलाहट ग़ायब हो चुकी थी, सोते हुए पुलिसमैन को देखकर अब उस पर ज़रा-सा भी

असर नहीं हुआ। किसी चीज़ ने उसे आतंकित कर दिया था। उस स्त्री की शान्त नीली आँखें उसकी कल्पना में तैर रही थीं। वे उसका पीछा नहीं छोड़ रही थीं। दृढ़ निश्चय के साथ सीधे उसकी ओर ताक रही थीं। इसने उसका हृदय बैठा दिया था और वह एक बेचैनी का अनुभव कर रहा था।

घड़ी पर उसने एक नज़र डाली, अपनी पेटी को उसने कसा और फिर दफ़्तर से बाहर हो गया।

“लगता है कि उससे फिर किसी समय मेरी भेंट होगी, भेंट होकर रहेगी,” वह बुदबुदा उठा।

2

और उसकी भेंट हुई।

साँझ का वक़्त था। बड़े दफ़्तर के सामने वह ड्यूटी पर खड़ा था। तभी, कोई पाँच डग दूर, उसकी नज़र उस पर पड़ी। वह चौक की ओर जा रही थी

- वैसे ही धीरे-धीरे, जैसे तैर रही हो। उसकी नीली आँखें सीधे सामने की ओर ताक रही थीं और उसकी समूची आकृति में, जो इतनी ऊँची और कमनीय थी, उसके पृष्ठ-भाग और वक्षों की हरक़त में, उसकी आँखों के उस निस्संग भाव में ऐसा कुछ था जो किसी को पास नहीं फटकने देता था। उसकी भौहों की गहरी रेखा ने, जो भाग्य के सामने अत्यन्त निरीहता की सूचक थी और जो अब - उस वक़्त की तुलना में, जबकि पहली बार उसने उसे देखा था, कहीं अधिक प्रत्यक्ष मालूम होती थी, उसके गोल

रूसी चेहरे को अत्यन्त कठोर बनाकर बिगाड़ दिया था।

पोदशिबलो ने अपनी मूँछों को ऐंठा, मनोरंजक कल्पनाओं में रम गया और निश्चय किया कि वह उसे अपनी आँखों की ओट नहीं होने देगा।

"ज़रा ठहर तो, शैतान की पुडिया कहाँ भागी जाती है!" मन ही मन उसने उसे चुनौती दी।

इसके पाँच मिनट बाद चौक में पड़ी एक बेंच पर वह उसकी बग़ल में बैठा था।

"क्यों, मुझे पहचाना नहीं?" उसने मुस्कुराते हुए पूछा।

उसने अपनी आँखें उठाईं और शान्त भाव से उस पर एक नज़र डाली।

"पहचाना। कहो, कैसे हो?" उसने खिन्न आवाज़ में कहा और उसे अपना हाथ तक नहीं भेंट किया।

"तुम सुनाओ, कैसे चल रहा है? क्या तुम्हें अपना कार्ड मिल गया?"

"यह रहा," और वह, उसी निस्संग भाव से, अपने कपड़ों की जेब टटोलने लगी।

इससे वह अचकचा उठा।

"अरे नहीं, उसे दिखाने की ज़रूरत नहीं। मैं तुम्हारा यक़ीन करता हूँ। इसके अलावा, मुझे कोई अधिकार नहीं है...मतलब यह कि...कैसे गुज़र रही है?" और इस प्रश्न के मुँह से निकलते ही उसने मन ही मन कहा, "जहन्नुम में जाये, मेरी बला से! और यह लाग-लपेट और अगल-बग़ल से ताँक-झाँक कैसी? क्या उसे

छूते डर लगता है? सुनो, पोदशिबलो, क्यों नहीं एकदम खुलकर सीधे क़िस्सा पार कर लेते!"

लेकिन, इन तथा इस तरह की अन्य बातों से अपनेआप को लाख बढ़ावा देने पर भी, वह 'एकदम खुलकर सीधे क़िस्सा पार' नहीं कर सका। उस स्त्री में कुछ था जो आदमी को एक निश्चित प्रसंग को छेड़ने से रोकता है।

"कैसे गुज़र रही है? कोई ख़ास बुरी नहीं, भला हो उस..." वह आगे नहीं बोल सकी। उसके गाल शर्म से लाल हो उठे।

"तब तो बहुत अच्छा है। बधाई। लेकिन इस धन्धे को निभाना बड़ा कठिन है, जब तककि उसकी आदत न पड़ जाये। क्यों, ठीक है न?"
सहसा वह उसकी ओर झुक गयी - सफ़ेद और बल खाता हुआ चेहरा, गोल मुँह, लगता था जैसे वह रोने के लिए उमड़-घुमड रही हो, लेकिन वह उसी प्रकार सहसा पीछे भी हट गयी - अपनेआप को पीछे खींचकर वह फिर वैसी ही निस्संग हो गयी।

"ठीक है। मैं इसकी अभ्यस्त भी हो जाऊँगी," उसने सुस्पष्ट और समतल आवाज़ में कहा, फिर रुमाल निकालकर ज़ोरों से अपनी नाक साफ़ की।
उसका सामीप्य, उसका हिलना-डोलना और उसकी शान्त निश्चल नीली आँखें, पोदशिबलो को ऐसा मालूम हुआ जैसे वह भीतर ही भीतर किसी अतल गहराई में डूबा जा रहा हो।

उसकी घबराहट सीमा पार कर चली। वह बैठा न रह सका। वह

उठ खड़ा हुआ और बिना एक शब्द मुँह से निकाले उसने अपना हाथ बढ़ा दिया।
“अच्छा तो अब विदा,” उसने धीमे से कहा।
उसने अपना सिर हिलाया और तेज़ डग भरता तथा अपनी बेवक़ूफ़ी पर अपने को कोसता वहाँ से चल दिया।

“लेकिन ज़रा ठहरो, मेरी शरीफ़ पतुरिया। तुमने अभी मेरा रंग नहीं देखा। एक दिन, जब तुम्हें पता चलेगा कि मैं क्या हूँ, तो भूल जाओगी अपने हवाई घोड़े पर सवार होना!” वह मन ही मन बड़बड़ाया और साथ ही उसने यह भी अनुभव किया कि वह व्यर्थ ही उस पर अपना बुखार उतार रहा है। और इससे वह और भी अधिक झुँझला उठा।

3

अगले सप्ताह, एक दिन साँझ के समय, पोदशिबलो कारवाँ-सराय से साइबेरियाई घाट की ओर जा रहा था। तभी गाली-गलौज, स्त्रियों की चीख़-चिल्लाहट तथा अन्य कुत्सित आवाज़ें सुनकर वह रुक गया। ये आवाज़ें एक क़हवाख़ाने की खिड़की में से आ रही थी।

“मदद! पुलिस!” किसी स्त्री की मरमराती आवाज़ आयी।
अचानक घूँसों की घनघनाहट, मेज़-कुर्सियों की उठा-पटक और इन सब आवाज़ों को डुबाती हुई एक आदमी की गहरी आवाज़।
“ख़ूब, बहुत ख़ूब! और, एक बार और सीधे थूथनी पर!” वह ज़ोरों से चिल्ला- चिल्लाकर उकसा रहा था।

सहायक पुलिस अफ़सर तेज़ी से दौड़कर सीढ़ियों पर चढ़ गया, क़हवाख़ाने के दरवाज़े पर जमा तमाशा देखने वालों की भीड़ को धकियाता भीतर घुसा और यह दृश्य उसने देखा -
नीली आँखों वाली उसकी परिचित स्त्री एक मेज़ पर पड़ी अपने बायें हाथ से एक अन्य स्त्री के बालों को दबोचे थी और दाहिने हाथ से उस स्त्री के सूजे हुए मुँह पर तेज़ और निर्मम घूँसों की बौछार कर रही थी।

अपनी नीली आँखों को वह बेरहमी से सिकोड़े थी और उसके होंठ कसकर भिचे हुए थे। उसके मुँह के छोरों से ठोड़ी तक दो गहरी रेखाएँ खिंची थी और उसका चेहरा - जो कभी इतना विकारशून्य था कि देखकर अचरज होता था - अब बनैले जन्तु की भाँति निर्मम ग़ुस्से से तमतमा रहा था, एक ऐसे जीव का चेहरा, जो एक सहजाति को दारुण यन्त्रणा देने और इसमें आनन्द लेने के लिए तत्पर था।

जिस स्त्री पर वह प्रहार कर रही थी, वह केवल धीमी आवाज़ में भुनभुना रही थी, अपने को छुड़ाने का प्रयत्न कर रही थी और हवा में अपनी बाँहें छटपटा रही थी।

पोदशिबलो को ऐसा अनुभव हुआ जैसे उसका समूचा रक्त तेज़ी से दिमाग़ की ओर दौड़ रहा हो। किसी से किसी चीज़ का बदला लेने की अन्धी इच्छा से वह उतावला हो उठा और तेज़ी से आगे लपककर, क्रोध से पागल उस स्त्री की कमर को दबोच, उसे अलग खींच लिया।

मेज़ उलट गयी। रकाबियाँ झनझनाकर फ़र्श पर जा गिरी। दर्शकों की बनैली चीख़ें और हँसी गूँज उठी।

ग़ुस्से और झुँझलाहट में पोदशिबलो की आँखों के सामने सभी काट-छाँट के चेहरे कौंध गये - हँसते हुए और लाल। स्त्री को वह अपनी बाँहों में दबोचे था और वह हाथ-पाँव पटक रही थी। वह उसके कानों के पास अपना मुँह ले गया और फुँकार उठा - "सो यह तुम हो, क्यों? इस तरह तमाशा खड़ा करती, उत्पात मचाती?"

नीली आँखों वाली स्त्री की शिकार - दूसरी स्त्री - टूटी रकाबियों के बीच फ़र्श पर पड़ी सुबकियाँ भर रही थी और सुध-बुध भूलकर कलप रही थी।
नाटे क़द का एक चपल आदमी, जो लम्बा कोट पहने था, पोदशिबलो को घटना का विवरण बता रहा था -

"बात यह हुई, सरकार, कि उसने, जो वहाँ पड़ी है, इसे गाली दी। कहा - 'हरजाई, कुतिया!' सो इसने उसके एक तमाचा जड़ दिया और उसने इस पर चाय का गिलास फेंक मारा, और तब इसने उसका झोंटा पकड़कर चित कर दिया और - धमाधम! एक के बाद एक धमाधम! इसने उसे ऐसी मार पिलाई कि कोई भी उस पर गर्व कर सकता है। सच, बड़े मज़बूत पुट्ठे हैं इसके - इस स्त्री के।"

"मज़बूत पुट्ठे - क्यों?" स्त्री को अपनी बाँहों में और भी ज़्यादा कसते हुए पोदशिबलो गरजा और ख़ुद उसका हृदय किसी से

जूझने की भयानक इच्छा से विह्वल हो उठा।

लाल गरदन और चौड़ी पीठ वाला एक आदमी - खिड़की से बाहर अपनी गरदन निकाले और हास्यजनक ढंग से अपनी चौड़ी पीठ को कमान बनाये

- नीचे सड़क की ओर चिल्लाया -

“ऐ कोचवान, इधर आओ!”

“चलो अब। पुलिस स्टेशन चलो। दोनों की दोनों। एइयू, उठकर खड़ी हो...और तुम कहाँ मर रहे थे अब तक? अपनी ड्यूटी का कुछ ख़याल नहीं?

बेवक़ूफ़! ले जाओ इन्हें थाने, जल्दी करो। दोनों की दोनों को, समझे!”

पुलिसमैन पहले एक के और फिर दूसरी के बदन में डण्डा गड़ाता बहादुरी के साथ उन्हें खदेड़ ले गया।

“कनयक और सोडा-वाटर, जल्दी लाओ - चटपट!” खिड़की के पास एक कुर्सी पर ढहते हुए पोदशिबलो ने बैरा से कहा। थकान और हर किसी से तथा हर चीज़ से वह झुँझलाहट का अनुभव कर रहा था।

+++

अगली सुबह वह उसके सामने खड़ी थी - वैसी ही शान्त और दृढ़ जैसी कि वह पहली भेंट के समय थी। वह अपनी नीली आँखों से सीधे उसकी ओर देख रही थी और उसके बोलने की प्रतीक्षा कर रही थी।

पोदशिबलो ने, जिसे रात ढंग से नींद नहीं आयी थी और जो इस कारण और भी अधिक झुँझलाया हुआ था, मेज़ पर पड़े काग़ज़ों को इधर से उधर पटका, लेकिन इससे उसे कुछ मदद नहीं मिली और ऐसी कोई बात उसे नहीं सूझी जिसे वह उससे कहता। ये पक्षपातपूर्ण अभियोग और लांछनापूर्ण जुमले - जिनका ऐसे मौक़ों पर आमतौर से प्रयोग किया जाता है - उसके मुँह से नहीं ही निकले। वह उनसे कहीं अधिक ज़ोरदार और प्रतिशोधपूर्ण चीज़ उसके मुँह पर पटकना चाहता था।

"हाँ तो बोलो, उस झगड़े की शुरुआत कैसे हुई?"

"उसने मेरा अपमान किया," स्त्री ने कहा।

"ओह, बहुत बड़ा अपराध किया!" पोदशिबलो ने व्यंग्य से कहा।

"उसे इसका कोई अधिकार नहीं था। मेरा उससे कोई मुक़ाबला नहीं किया जा सकता।"

"हे भगवान! तो तुम अपने को क्या समझती हो?"

"मैंने मजबूरी से इस धन्धे को अपनाया है, लेकिन वह..."

"तो तुम्हारी राय में वह मौज-मज़े के लिए यह करती है। क्यों, यही न?"

"वह?"

"हाँ, वह!"

"उसके कोई बाल-बच्चे नहीं हैं।"

"बस करो, मोरी की कीच! क्या तुम समझती हो कि अपने बच्चों का रोना रोकर मुझे फुसला लोगी? इस बार तो मैं तुम्हें

छोड़ दूँगा, लेकिन अगर तुमने फिर कोई गड़बड़ की तो चौबीस घण्टों के भीतर तुम्हें यह नगर छोड़ देना पड़ेगा। मेले से अपने पाँव दूर ही रखना। समझी! घबराती क्यों हो, तुम्हारी जैसियों को मैं ख़ूब समझता हूँ। ज़रा-सी देर में ठीक कर दूँगा। उत्पात मचाती हो, क्यों? वह सबक पढ़ाऊँगा कि याद रखोगी, छिनाल कहीं की!" शब्द तेज़ी से, बिना किसी प्रयास के, उसके मुँह से निकल रहे थे, हर शब्द पिछले शब्द से अधिक अपमानजनक। स्त्री का चेहरा पीला पड़ गया था और उसने अपनी आँखों को ठीक वैसे ही सिकोड़ रखा था जैसेकि पिछली रात क़हवाख़ाने में उसने सिकोड़ा था।

"जाओ, दफ़ा हो जाओ यहाँ से!" मेज़ पर घूँसा मारते हुए पोदशिबलो चिल्ला उठा।
"भगवान ही तुम्हारा न्याय करेगा," उसने रुखी और धमकी भरी आवाज़ में कहा और तेज़ डगों से दफ़्तर से बाहर चली गयी।

"न्याय की बच्ची!" पोदशिबलो चीख़ा। उसका अपमान करने में उसने सुख का अनुभव किया। उसके शान्त और चिर विकारशून्य चेहरे से और जिस ढंग से अपनी नीली आँखों से सीधे उसकी ओर वह देखती थी उससे वह बुरी तरह झुँझला उठा था। पता नही, अपने को क्या समझती है? बच्चे? ग़लत, निरा बहाना! बच्चों का भला इससे क्या वास्ता? एक मामूली बेसवा - सड़कों की धूल चाटने वाली - मेले आयी कि धन कमायेगी लेकिन बनती है शराफ़त की पुतली! पता नहीं क्यों? एक शहीद - मजबूरी - बच्चे, भला किसके गले के नीचे उतरेगी यह

ख़ुराफ़ात? इतनी हिम्मत है नहीं कि अपने को उसी रूप में देख सके जो कि वह है, सो परिस्थितियों के सिर दोष मढ़ ख़ुद अपने को दूध का धुला जताती है! वाह!

4

लेकिन बच्चे भी आ़खिर थे ही। गोरे चेहरे का एक छोटा लड़का, लजीला, स्कूल की पुरानी फटी वर्दी पहने, कानों पर एक काला रुमाल बाँधे, और एक छोटी लड़की, प्लेटदार मैकिन्टोश पहने, जो उसके बदन से काफ़ी बड़ी और ढीली-ढाली थी। दोनों काशिन घाट के तख़्तों पर बैठे शरद की हवा में काँप रहे थे और चुपचाप बतिया रहे थे। उनकी माँ उनके पीछे खड़ी थी, कुछ गाँठों की टेक लगाये और मुग्ध नीली आँखों से उन्हें देख रही थी।

छोटे लड़के की शक्ल उससे मिलती-जुलती थी। उसकी आँखें भी नीली थीं। रह-रहकर वह अपना सिर उठाता, जिसपर वह ऐसी टोपी पहने था, जिसकी कलगी टूटी हुई थी, अपनी माँ की ओर देखकर मुस्कुराता और कुछ कहता। छोटी लड़की के चेहरे पर बुरी तरह चेचक के दाग़ थे। छोटी-सी पैनी नाक और दो बड़ी-बड़ी भूरी आँखें, जिनमें चंचलता और समझदारी की चमक थी। घाट के तख़्तों पर उनके अगल-बगल, भाँति-भाँति के बण्डल और पोटले-पोटलियाँ पड़ी थीं।

सितम्बर के अन्त के दिन थे। सारे दिन बारिश पड़ती रही थी। नदी-तट पर कीचड़ फैली थी और ठण्डी नम हवा चल रही थी।

वोल्गा नदी बढ़ी हुई थी। गँदली लहरें ज़ोरों से आवाज़ करती तट से टकरा रही थीं और हवा में एक धीमी थिर गूँज भरी थी। भाँति-भाँति के, सभी तरह के, लोग आ-जा रहे थे। उन सभी के चेहरों पर व्यग्रता की एक झलक थी, जैसे उन्हें अपने काम की उतावली हो। नदी के दृश्य की इस उमड़ती-घुमड़ती पृष्ठभूमि में एक माँ और दो बच्चों की यह शान्त तिकड़ी अपनी ओर तुरत ध्यान खींचती थी।

सहायक पुलिस अफ़सर पोदशिबलो की नज़र उनपर पड़ चुकी थी - और, दूर खड़े रहने पर भी, वह इन तीनों को बड़ी बारीक़ी से देख रहा था। वह उनकी प्रत्येक हरक़त से अवगत था और, जाने क्यों, शर्म का अनुभव कर रहा था।
काशिन वाला स्टीम-बोट आधा घण्टे में इस घाट से छूटकर वोल्गा के चढ़ाव की ओर जाने वाला था।
लोग बाहर जैटी पर पहुँचने लगे थे।

नीली आँखों वाली स्त्री झुकी, थैलों और पोटले-पोटलियों को अपने कन्धों तथा बग़ल में दाबकर सीधी हो गयी और सीढ़ियाँ उतरती चल दी। बच्चे उसके आगे चल रहे थे - हाथ में हाथ थामे और अपने हिस्से की पोटलियों को अपने कन्धों पर रखे।

पोदशिबलो को भी बाहर जैटी पर पहुँचना था। वह चाहता तो यही था कि न जाये, लेकिन उसके सामने और कोई चारा न था। सो कुछ देर बाद वह भी वहाँ, टिकट-घर से कुछ दूर, जाकर खड़ा हो गया।

उसकी परिचित स्त्री टिकट ख़रीदने आयी। एक हाथ में वह अपना भारी बटुवा थामे थी जिसमें से नोटों की एक गड्डी बाहर झाँक रही थी।

"मैं चाहती हूँ," उसने कहा, "...मतलब यह...ओह, बात यह है कि बच्चे तो दूसरे दर्जे में जायेंगे - कोस्त्रेमा...और मैं तीसरे में, लेकिन यह बताइये, क्या मैं उन दोनों के लिए एक ही टिकट नहीं ख़रीद सकती? नहीं? अपवाद रूप में - ख़ास तौर से - तो बना सकते हैं न? ओह धन्यवाद, बहुत-बहुत धन्यवाद! भगवान तुम्हारा भला करे।"

और वह टिकट लेकर चल दी। उसका चेहरा खिला हुआ था। बच्चे उससे चिपके जा रहे थे, घाघरा खींच-खींचकर उससे पूछ रहे थे। उसने उनकी बात सुनी और मुस्कुरा दी।

"तुम भी ख़ूब हो। मैंने कहा न कि ख़रीद दूँगी, क्यों, कहा था न? क्या मैं कभी किसी चीज़ से तुम्हें वंचित रख सकती हूँ? हरेक के लिए दो-दो? अच्छी बात है। तुम लोग यहीं ठहरो। अभी लेकर आती हूँ।"

वह दरवाज़े के पास कुछ दुकानों पर गयी जहाँ फल और मिठाइयाँ बिकती थीं।

वहाँ से लौटकर वह अब फिर अपने बच्चों के बीच आ गयी थी और उनसे कह रही थी -

"यह बहुत ही बढ़िया ख़ुशबूदार साबुन तुम्हारे लिए है, वारिया, ज़रा सूँघकर देखो! और यह क़लमतराश चाकू तुम्हारे लिए है,

पेत्या! देखा, मैं ज़रा भी नहीं भूली। और ये हैं पूरी एक दर्जन नारंगियाँ। लेकिन इन्हें एक बार में ही ख़त्म न कर डालना!"

स्टीम-बोट घाट से आ लगा। एक झटका। लोग डगमगा गये। स्त्री ने अपने दोनों बच्चों को समेटकर अपने से चिपका लिया और चौकन्नी आँखों से इधर-उधर देखा। ख़तरे का कोई चिह्न न देख वह हँसी। बच्चे भी हँसे। स्टीम-बोट पर चढ़ने की सीढ़ी लटका दी गयी और लोगों की धारा बोट की ओर बढ़ चली।

"ऐ धीरे-धीरे! धक्का न दो!" पोदशिबलो भीड़ पर चिल्लाया।

"एइयू बेवक़ूफ़!" वह एक बढ़ई पर गरजा जो हथौड़ियों, आरियों, बरमों, रेतियों और अन्य औजारों से लदा-फदा था, "यह क्या कबाड़ उठा लाया है? एक तरफ़ हट और स्त्री को रास्ता दे जो बच्चों को अपने साथ लिये है। ओह, कितना मूर्ख आदमी है।" कहते-कहते उसका स्वर एकदम मुलायम पड़ गया जब वह स्त्री - नीली आँखों वाली उसकी परिचिता - गुज़रते समय उसकी ओर देखकर मुस्कुरायी और बोट पर पहुँच जाने के बाद सिर झुकाकर उसने अभिवादन किया।

तीसरी सीटी।

"रस्से खोल डालो!" कप्तान के मंच से कमान की आवाज़ आयी।

बोट काँपा और हरक़त करने लगा।

पोदशिबलो डेक पर खड़े लोगों में अपनी परिचिता को टोह रहा था और जब वह दिखायी पड़ी तो उसने अपनी टोपी उतार ली

और सिर झुकाकर अभिवादन किया।

जवाब में, रूसी ढंग से, वह झुकी और क्रास का चिह्न बनाया।

और इस प्रकार वह तथा उसके बच्चे कोस्त्रमा लौट गये।

उन्हें विदा करने के बाद सहायक पुलिस अफ़सर पोदशिबलो ने एक गहरी उसाँस छोड़ी और अपनी ड्यूटी पर लौट आया, भारी उदासी और दुख का अनुभव करते हुए।

(1895)